डाक-पंजीयन म.प्र./भोपाल/4-472/2024-26
पोस्टिंग दिनांक : प्रतिमाह दिनांक 2 से 3, पृष्ठ सं. 132
प्रकाशन दिनांक : 1 से 1 प्रतिमाह

आर.एन.आई क्र. : 38470/83
आई.एस.एस.एन. क्र. : 2456-7167

मूल्य 50/-

42 वाँ वर्ष

जून 2024

# अक्षरा

231

साहित्य की मासिकी

*बैठि रही अति सघन बन, पैठि सदन-तन माँह।*
*देखि दुपहरी जेठ की, छाँहौं चाहति छाँह ॥*
– बिहारी

साधो सबद साधना कीजै
अजित वडनेरकर

स्तंभ
विनय पडंगी राजाराम, रामेश्वर मिश्र पंकज, कुसुमलता केडिया

अनुवाद
विभा खरे

आलेख
शंकर शरण, आनन्दप्रकाश त्रिपाठी, उमराव सिंह चौधरी, तुलसी टावरी

शोधालेख
महक, अश्वनी कुमार द्विवेदी, राहुल सिद्धार्थ, चंद्रकांत सिंह, रामजीत प्रसाद, गीता शास्त्री, खुशबू पांचाल

प्रसंगवश
अवधेश तिवारी

संस्मरण
देवेन्द्र कुमार पाठक, मीनाक्षी जोशी

आत्मकथ्य
जगदीश कौशल

कहानी
शशिकला त्रिपाठी, महेश दवगे, वासती रामचंदन

कविता
सविता दास 'सवि', रश्मि रमानी, पुष्कर राय जोशी

नवगीत
यतीन्द्रनाथ 'राही'

# अंक 231, जून –2024

## अनुक्रम


सम्पादकीय

**साधो सबद साधना कीजै**

दीवानेख़ास और आमख़ास / **अजित वडनेरकर/10**

**हिंदी एक विचार अनेक-5**

ज्ञान-विज्ञान और हिंदी / **बिनय षडंगी राजाराम/13**

**धर्मशास्त्रों में प्रतिपादित समाज शास्त्र-14**

धर्म की स्थापना ही न्याय है / **रामेश्वर मिश्र पंकज/16**

अष्टावक्र और राजपंडित का शास्त्रार्थ / **कुसुमलता केडिया/19**

**अनुवाद**

टॉमी टॉमी हैंकर चीफ़ (**मूल : थॉमस जेफरी हैंक्स**) / **अनु. विभा खरे/21**

**आलेख**

भारत में कम्युनिज्म : एक अनजान संस्मरण / **शंकर शरण/25**

कालिदास के साहित्य में विश्वमंगल की भावना / **आनन्दप्रकाश त्रिपाठी/33**

स्तालिन के बर्बर अत्याचारों के उद्घाटक : सोल्झेनित्सिन / **उमराव सिंह चौधरी/40**

शिक्षा-प्राप्ति, अर्थ की बाध्यता से कैसे मुक्त हो? /**तुलसी टावरी/43**

**शोधालेख**

छायावादी काव्य का प्रतिमान : लहर / **महक/46**

आधुनिक आलोचना की कसौटी में तुलसी काव्य / **अश्वनी कुमार द्विवेदी/50**

जयशंकर प्रसाद के नाटकों की दार्शनिकता : एक मूल्यांकन / **राहुल सिद्धार्थ/54**

दादू की कविताओं में निरंजन राम का उद्घोष / **चंद्रकांत सिंह/57**

भीष्म साहनीकृत नाटक : मानवीय सरोकार / **रामजीत प्रसाद/60**

कश्मीर : एक सांस्कृतिक संदर्भ / **गीता शास्त्री/64**

गणिका : केवल तवायफें नहीं वतन परस्त भी / **खुशबू पांचाल/67**

**प्रसंगवश**

विलुप्त होती एक और सरस्वती / **अवधेश तिवारी/69**

# दादू की कविताओं में निरंजन राम का उद्घोष

- चंद्रकांत सिंह

**जन्म** - 1 जून 1984।
**जन्म स्थान** - सोनभद्र (उ.प्र.)।
**शिक्षा** - एम.ए., पीएच.डी.।
**रचनाएँ** - चार पुस्तकें प्रकाशित।

संत दादू दयाल निर्गुण साधना के अनूठे संत थे, अत्यंत दयालु होने के कारण उनका नाम दादू दयाल पड़ा। उनकी कविताओं में गुरु महिमा, शब्द-महिमा, राम महिमा का महात्म्य है। उनके जीवन को शब्द की यात्रा का जीवन कह सकते हैं जहाँ दादू पग रखते हैं, शब्दों के द्वारा उन्हें सृष्टि के अथ से इति का बोध हो जाता है। दादू के काव्य में राम का बारंबार उल्लेख है किन्तु साकार राम की बजाय निराकार राम की महिमा आद्यंत व्याप्त है। दादू इन्हीं निरंजन राम की साधना करते हैं। उनके यहाँ शब्द की साधना सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। संत दादू का मानना है कि पूरे ब्रह्माण्ड में परमात्मा की गहन उपस्थिति है, इस उपस्थिति को जो भी भक्त जानने का प्रयास करते हैं वे प्रभु से नाभिनाल जुड़ जाते हैं। दादू मानते हैं कि रोम-रोम में प्रभु का प्रसार है किंतु प्राय: कोई उन्हें चीह्न नहीं पाता। जब माया का कुहरिल आवरण छँटता है तभी ब्रह्म से जीव की वास्तविक पहचान होती है। दादू की कविताओं में परम पुरुख को पाने की गहरी तृषा है, यह तृषा ही उन्हें पूरे गुरु से जोड़ती है, जिससे कि माया का झीना परदा गिर जाता है। दादू प्रभु भक्ति में पगे हुए कह उठते हैं कि हर ओर प्रभु की आहट है-

**दादू देखु दयालु को, सकल रह्या भरपूर।**
**रोम रोम में रमि रह्या, तूँ जनि जानै दूर।।**
**दादू देखु दयालु को, बाहरि भीतरि सोइ।**
**सब दिसि देखौं पीव को, दूसर नाहीं कोइ।।**
**दादू देखु दयालु को, सनमुख सांई सार।**
**जीधरि देखौं नैन भरि, तीधरि सिरजनहार।।**
**दादू देखु दयालु को, रोक रह्या सब ठौर।**
**घट-घट मेरा साँइयाँ, तूँ जनि जानै और।।**

सांसारिक व्यक्ति की गति संसार में रहती है, संसार में पूरी तरह गर्क होकर परमात्मा से मिलन कहाँ संभव है? प्रभु को प्राप्त करने के लिए तो मनमुख की अपेक्षा गुरुमुख होना अनिवार्य है। संत दादू की कविता में मन के पार जाने की उदग्र आकांक्षा है और यही आकांक्षा उन्हें गुरु और शब्द से जोड़ती है। गुरु से मिलते ही दादू के जीवन की दिशा ही बदल जाती है। संत दादू मानते हैं कि गुरु से ज्ञान प्राप्त कर मनमुख अवस्था से गुरुमुख अवस्था को प्राप्त करना ही इस जीवन का ध्येय है और कोई विरला ही इसे प्राप्त कर पाता है। दादू दयाल मन के उहापोह से निकलकर परम चैतन्य को प्राप्त करने को ही महत्त्वपूर्ण मानते हैं। इस संदर्भ में वह स्पष्ट लिखते हैं -

**मन के मतै सब कोई खेलै, गुरु मुख बिरला कोइ।**
**दादू मन की मानै नहीं, सतगुरु का सिष सोइ।।**
**सब जीवों को मन ठगै, मन को बिरला कोइ।**
**दादू गुरु के ज्ञान सौं, साई सन्मुख होइ।।**

संत दादू जिस समय ज्ञान, भक्ति एवं योग का उपदेश दे रहे थे, वह घोर पतनशील समाज था। गुरु को अपशब्द कहते हुए बहुत सारे निगुरे भी ब्रह्म की ओट ले रहे थे किन्तु दादू इस बात को भलीभाँति जानते थे कि गुरु के बिना सब निस्सार है। गुरु के द्वारा ही विद्या मिलती है चाहे वह दैहिक हो या अदैहिक। यही कारण है कि अत्यंत विनयशीलता के साथ उन्होंने गुरु के प्रति समर्पण किया। उन्होंने गुरु के सान्निध्य में साधना कर रहे शिष्यों की प्रशंसा और गुरु के बिना प्रलाप कर रहे वाग्वादियों की यथायोग्य निंदा भी की है। यह सत्य भी है कि वाकपटुता या गंभीर पांडित्य से परमात्मा को कदापि नहीं जाना जा सकता। निरंजन राम को तो गुरु के आशीष से ही निरख सकते हैं। दादू की मान्यता है कि गुरु द्वारा ही शब्द की प्राप्ति होती है और सतत् शब्द-साधना से निर्गुण राम से भेंट होती है-

**सगुरा निगुरा परषिये, साध कहैं सब कोइ।**
**सगुरा साचा निगुरा झूठा, साहिब के दरि होइ।।**
**सगुरा सति संजम रहै, सन्मुष सिरजनहार।**
**निगुरा लोभी लालची, भूंचै विषय विषै विकार।।**